Shodh Sangam Patrika
E-ISSN: 3049-0707, Volume 3 | Issue 2 | (April - June 2026)

सुभद्रा कुमारी चौहान के कथा-साहित्य में स्त्री-चेतना और सामाजिक यथार्थ

शालिनी यादव
शोधार्थी, हिन्दी विभाग, वी. एस. एस. डी. कॉलेज, कानपुर

सारांश-

प्रस्तुत शोध-पत्र में सुभद्रा कुमारी चौहान के कथा-साहित्य में सामाजिक और स्त्री-केंद्रित पक्षों का अध्ययन किया गया है। सुभद्रा को प्रायः राष्ट्रीय चेतना और देशभक्ति की कवयित्री के रूप में स्मरण किया जाता है, किंतु उनका कथा-साहित्य भी हिन्दी साहित्य में विशिष्ट महत्त्व रखता है। उनकी कहानियों में तत्कालीन भारतीय समाज, पारिवारिक जीवन, स्त्री-अनुभव, आर्थिक अभाव, सामाजिक विषमता और मानवीय संवेदना का यथार्थ चित्रण मिलता है। उनके कथा-साहित्य में स्त्री केवल करुणा या सहानुभूति की पात्र नहीं है, वह आत्मसम्मान, नैतिक साहस और चेतना से सम्पन्न व्यक्तित्व के रूप में सामने आती है। पारिवारिक दबाव, सामाजिक रूढ़ियाँ, जातिगत संकीर्णता, आर्थिक असमानता और पितृसत्तात्मक व्यवस्था स्त्री के जीवन को प्रभावित करती हैं, फिर भी वह अपनी गरिमा और मानवीय मूल्यों को बचाए रखने का प्रयास करती है। सुभद्रा कुमारी चौहान की कहानियों में दलित, वंचित और ग्रामीण स्त्री का चित्रण भी संवेदनशील दृष्टि से हुआ है। इससे उनका कथा-साहित्य मात्र स्त्री-जीवन की पीड़ा का दस्तावेज नहीं रहता, बल्कि सामाजिक न्याय, समानता और मानवीयता की चेतना को भी व्यक्त करता है। सुभद्रा की कहानियाँ अपने समय के समाज की विसंगतियों को उजागर करते हुए स्त्री-अस्मिता, आत्मसम्मान और सामाजिक यथार्थ को प्रभावपूर्ण ढंग से प्रस्तुत करती हैं। उनका कथा-साहित्य हिन्दी कहानी परंपरा में स्त्री-चेतना और सामाजिक सरोकार की दृष्टि से महत्त्वपूर्ण स्थान रखता है।

कुंजी शब्द- स्त्री-चेतना, सामाजिक यथार्थ, नारी अस्मिता, पारिवारिक विसंगति, मानवीय संवेदना।

प्रस्तावना

सुभद्रा कुमारी चौहान हिन्दी साहित्य की प्रमुख रचनाकारों में गिनी जाती हैं। उनकी कहानियों में तत्कालीन भारतीय समाज, स्त्री-जीवन, पारिवारिक संबंध, सामाजिक विषमता और मानवीय संवेदना का सजीव चित्रण मिलता है। सुभद्रा ने जिस समय लेखन किया, वह भारतीय समाज में परिवर्तन और जागरण का समय था। एक ओर देश में स्वाधीनता आंदोलन चल रहा था, दूसरी ओर समाज में अनेक रूढ़ियाँ, असमानताएँ और कुरीतियाँ विद्यमान थीं। स्त्रियाँ पारिवारिक और सामाजिक बंधनों से घिरी हुई थीं। शिक्षा, स्वतंत्र निर्णय, आत्मसम्मान और अधिकार जैसे प्रश्न उनके जीवन से जुड़े हुए थे। सुभद्रा कुमारी चौहान ने अपने कथा-साहित्य में इन्हीं प्रश्नों को संवेदनशीलता के साथ अभिव्यक्त किया है।

राजेन्द्र उपाध्याय ने सुभद्रा के व्यक्तित्व और लेखन में स्त्री-स्वतंत्रता की चेतना को रेखांकित करते हुए लिखा है- "मीरा के बाद सुभद्रा कुमारी चौहान दूसरी स्त्री हैं, जिन्होंने सिद्धांत नहीं गढ़े, रूढ़ियों के खिलाफ नारे नहीं लगाए, बल्कि लौह-शृंखलाओं से पहले स्वयं को मुक्त किया और फिर मुक्ति की तान छेड़ी।"[1] यह कथन सुभद्रा के व्यक्तित्व और कथा-दृष्टि दोनों को समझने में सहायक है। उनकी स्त्री-चेतना सिद्धांत या नारे के रूप में सामने नहीं आती, वह जीवन के वास्तविक संघर्षों, अनुभवों और सामाजिक स्थितियों से निर्मित होती है। इसीलिए उनकी कहानियाँ साहित्यिक रचनाएँ ही नहीं, अपने समय की स्त्री-स्थिति, सामाजिक यथार्थ और मानवीय मूल्यों का संवेदनशील दस्तावेज भी हैं।

सुभद्रा ने स्त्री को केवल करुणा या त्याग की प्रतिमा के रूप में प्रस्तुत नहीं किया। उनकी कहानियों में स्त्री संवेदनशील होने के साथ-साथ आत्मसम्मान और विवेक से भी सम्पन्न है। वह परिवार और समाज की मर्यादाओं से बँधी हुई दिखाई देती है, फिर भी उसके भीतर अपनी गरिमा को बचाए रखने की इच्छा विद्यमान रहती है। कहानियों में स्त्री-जीवन की अनेक समस्याएँ दिखाई देती हैं। कहीं स्त्री पारिवारिक उपेक्षा का सामना करती है, कहीं सामाजिक रूढ़ियों से संघर्ष करती है, तो कहीं आर्थिक और भावनात्मक असुरक्षा से घिरी रहती है। लेखिका इन स्थितियों को अतिनाटकीय ढंग से प्रस्तुत नहीं करतीं; वह स्त्री के दुःख, मौन, विवशता और संघर्ष को सहज कथा-प्रवाह में रखती हैं, इससे पाठक को स्त्री-जीवन की वास्तविक स्थिति समझने का अवसर मिलता है। वह पाठक के सामने ऐसे प्रश्न रखती हैं, जिनसे सामाजिक व्यवस्था, पारिवारिक संबंधों और स्त्री की स्थिति पर विचार करना आवश्यक हो जाता है।

स्त्री-चेतना का स्वरूप

सुभद्रा कुमारी चौहान के कथा-साहित्य में स्त्री-चेतना जीवन के वास्तविक अनुभवों से निर्मित चेतना है। उनकी कहानियों में स्त्री अपने समय की पारिवारिक, सामाजिक और सांस्कृतिक सीमाओं से घिरी हुई दिखाई देती है, पर वह इन सीमाओं के भीतर भी अपनी मानवीय गरिमा को बचाए रखने का प्रयास करती है। यही प्रयास उनके कथा-साहित्य में स्त्री-चेतना का मूल आधार बनता है। महादेवी वर्मा ने अपने संस्मरण 'पथ के साथी' में स्त्री के स्वतंत्र व्यक्तित्व से संबंधित सुभद्रा के विचारों को स्पष्ट करते हुए लिखा है- "मनुष्य की आत्मा स्वतंत्र है। फिर चाहे वह स्त्री-शरीर के अंदर निवास करती हो, चाहे पुरुष-शरीर के अंदर। इसी से पुरुष और स्त्री का अपना-अपना व्यक्तित्व अलग-अलग रहता।"[2] यह विचार सुभद्रा कुमारी चौहान की कहानियों में व्यक्त स्त्री-अस्मिता को समझने में सहायक है। सुभद्रा की कहानियों की स्त्रियाँ केवल सामाजिक भूमिकाओं तक सीमित नहीं हैं, वे माँ, पत्नी, बहन, पुत्री या विधवा के रूप में उपस्थित अवश्य होती हैं, पर इन भूमिकाओं के भीतर उनका स्वतंत्र व्यक्तित्व भी दिखाई देता है। वे जीवन की कठिन परिस्थितियों से गुजरते हुए भी अपने आत्मसम्मान और नैतिक विवेक को बनाए रखने का प्रयास करती हैं।

सुभद्रा ने स्त्री को केवल घरेलू संबंधों में बँधे हुए पात्र के रूप में नहीं देखा। उनके यहाँ स्त्री परिवार के प्रति उत्तरदायी है लेकिन अपने आत्मसम्मान को पूरी तरह त्याग देने वाली निष्क्रिय सत्ता नहीं है। 'निर्मला' जैसी कहानी में स्त्री के आत्मसम्मान, करुणा और सामाजिक उत्तरदायित्व का सशक्त चित्रण मिलता है। यहाँ नायिका पारिवारिक और सामाजिक दबावों के बीच भी अपने मानवीय मूल्यों और अधिकारों की रक्षा करती है। निर्मला अपने पति से स्पष्ट कहती है- "जितना इस घर में आपका अधिकार है, उतना ही मेरा भी है। यदि आप अपने किसी चरित्रहीन पुरुष मित्र को आदर और सम्मान के साथ ठहरा सकते हैं, तो मैं भी किसी असहाय अबला को कम-से-कम आश्रय तो दे ही सकती हूँ।"[3] यह कथन स्त्री-अधिकार, आत्मसम्मान और मानवीयता का संयुक्त प्रतिपादन करता है। निर्मला का यह स्वर पितृसत्तात्मक सोच के विरुद्ध एक शांत, परंतु प्रभावी प्रतिरोध है। इस कहानी में स्त्री-चेतना अपने अधिकार की माँग के साथ दूसरी पीड़ित स्त्री के प्रति संवेदना भी व्यक्त करती है। निर्मला का निर्णय केवल व्यक्तिगत विद्रोह नहीं है, वह एक असहाय स्त्री को आश्रय देकर समाज की उस मानसिकता को चुनौती देती है, जो स्त्री की गरिमा को संकीर्ण नैतिक मानदंडों से बाँधती है। निर्मला का चरित्र यह सिद्ध करता है कि सुभद्रा की स्त्री दया की पात्र नहीं, वह नैतिक रूप से जागरूक और सामाजिक उत्तरदायित्व से युक्त व्यक्तित्व है।

उनकी कहानियों में स्त्री-चेतना का एक महत्त्वपूर्ण रूप नैतिक दृढ़ता के रूप में सामने आता है। स्त्री-पात्र आर्थिक अभाव, पारिवारिक दबाव और सामाजिक उपेक्षा से गुजरती हैं, फिर भी वे अपने नैतिक विवेक से विचलित नहीं होतीं। 'होली' कहानी में करुणा का चरित्र आत्मसम्मान और नैतिक दृढ़ता का प्रतीक बनकर उभरता है। वह गरीबी स्वीकार

कर सकती है, पर अनैतिक साधनों से अर्जित धन को स्वीकार नहीं करती। कहानी में करुणा का कथन- "यही तो मेरी होली है, भैया"[4], स्त्री के मौन दुःख, पारिवारिक उपेक्षा और आत्मसम्मान को अत्यंत मार्मिक रूप से व्यक्त करता है। इस प्रसंग से स्पष्ट होता है कि सुभद्रा की स्त्री कमजोर परिस्थितियों में भी अपने भीतर की नैतिक शक्ति को सुरक्षित रखती है।

सुभद्रा कुमारी चौहान की कहानियों में विधवाओं, दलित और वंचित स्त्रियों, ग्रामीण महिलाओं तथा आर्थिक रूप से कमजोर वर्ग की स्त्रियों की पीड़ा को भी संवेदनशील ढंग से चित्रित किया गया है। 'किस्मत', 'भग्नावशेष' और 'अभियुक्ता' जैसी कहानियाँ स्त्री-जीवन की त्रासदियों, सामाजिक अन्याय और पितृसत्तात्मक मानसिकता को सामने लाती हैं। इन कहानियों में स्त्री केवल दुःख सहने वाली पात्र नहीं रहती, बल्कि सत्य, साहस और आत्मबल के माध्यम से अपनी अस्मिता की रक्षा करती दिखाई देती है। विशेष रूप से 'अभियुक्ता' में नायिका का आत्मविश्वास और सत्य के पक्ष में खड़े होने का साहस स्त्री-शक्ति का प्रभावशाली उदाहरण प्रस्तुत करता है। न्यायालय में उससे पूछा जाता है- "तुम्हारा नाम? - चुन्नी। पति का नाम? - मैं कुमारी हूँ। अच्छा तो पिता का नाम? - मैं नहीं जानती। मैं जब बहुत छोटी थी, तब या तो मेरे पिता मर गए थे या कहीं चले गए थे। मैंने उन्हें देखा ही नहीं।"[5] यह संवाद स्त्री की सामाजिक असुरक्षा, पहचान-संकट और पितृसत्तात्मक व्यवस्था की क्रूरता को गहराई से सामने लाता है। 'अभियुक्ता' की नायिका सामाजिक आरोपों और न्यायालय की कठोर व्यवस्था के सामने भी टूटती नहीं है। वह सत्य को निर्भीकता से व्यक्त करती है। यह साहस सुभद्रा की स्त्री-चेतना का महत्त्वपूर्ण पक्ष है।

ग्रामीण परिवेश में रची गई कहानियों में भी स्त्री-चेतना के विविध रूप दिखाई देते हैं। 'कैलाशी नानी' जैसी कहानी में वृद्ध और निर्धन स्त्री के भीतर छिपी नैतिक दृढ़ता, संवेदनशीलता और सामाजिक जागरूकता को रेखांकित किया गया है। यह कहानी दिखाती है कि समय आने पर स्त्री रक्षक और मार्गदर्शक की भूमिका भी निभा सकती है। इसी प्रकार 'राही' कहानी दो भिन्न सामाजिक वर्गों की स्त्रियों के माध्यम से स्त्री-अनुभवों और चेतनाओं के संवाद को प्रस्तुत करती है। इसमें वास्तविक पीड़ा और सामाजिक न्याय का प्रश्न उभरकर सामने आता है। सुभद्रा की स्त्री-चेतना केवल व्यक्तिगत अधिकारों तक सीमित नहीं है, उसमें सामाजिक उत्तरदायित्व और मानवीय संवेदना भी जुड़ी हुई है। उनकी स्त्रियाँ अपने दुख को समझती हैं, पर वे दूसरों की पीड़ा से भी अनभिज्ञ नहीं रहतीं। यही कारण है कि उनके कथा-साहित्य में स्त्री का संघर्ष केवल निजी संघर्ष नहीं रह जाता; वह सामाजिक व्यवस्था, नैतिकता और न्याय-बोध से जुड़ जाता है। लेखिका स्त्री को दया की वस्तु बनाकर प्रस्तुत नहीं करतीं, वरन उसके भीतर उपस्थित साहस, विवेक और आत्मसम्मान को पहचान देती हैं।

नारी जीवन की समस्याएँ और आत्मसम्मान

सुभद्रा कुमारी चौहान के कथा-साहित्य में नारी जीवन की समस्याएँ किसी एक स्थिति तक सीमित नहीं हैं; उनकी कहानियों में स्त्री कभी गृहस्थ जीवन की जिम्मेदारियों से घिरी हुई दिखाई देती है, कभी सामाजिक रूढ़ियों का सामना करती है, कभी आर्थिक अभाव से जूझती है और कभी सम्मानपूर्ण जीवन के लिए भीतर ही भीतर संघर्ष करती है। लेखिका ने स्त्री की पीड़ा को केवल भावुक प्रसंग के रूप में नहीं रखा, उसे समाज की संरचना और पारिवारिक व्यवस्था से जोड़कर देखा है। तत्कालीन भारतीय समाज में स्त्री से त्याग, सहनशीलता और मर्यादा की अपेक्षा अधिक की जाती थी, जबकि उसके अधिकारों और इच्छाओं पर पर्याप्त ध्यान नहीं दिया जाता था। परिवार और समाज दोनों स्तरों पर स्त्री का जीवन अनेक प्रकार के नियंत्रणों से घिरा हुआ था। विवाह, विधवा-जीवन, जातिगत संकीर्णता, आर्थिक निर्भरता और सामाजिक प्रतिष्ठा जैसे प्रश्न उसके जीवन को गहराई से प्रभावित करते थे। महादेवी वर्मा ने परिवार और

समाज के बंधनों की ओर संकेत करते हुए लिखा है- "समाज और परिवार व्यक्ति को बंधन में बाँधकर रखते हैं। ये बंधन देशकालानुसार बदलते रहते हैं और उन्हें बदलते रहना चाहिए; वरना वे व्यक्तित्व के विकास में सहायता करने के बदले बाधा पहुँचाने लगते हैं।"[6] यह कथन सुभद्रा की कहानियों में स्त्री-जीवन की स्थिति को समझने में अत्यंत प्रासंगिक है।

सुभद्रा ने इन स्थितियों को सहज भाषा और संवेदनशील दृष्टि से कथा का विषय बनाया। उनकी कहानियों में स्त्री की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि वह कठिन परिस्थितियों में भी अपने आत्मसम्मान को पूरी तरह खोने नहीं देती। वह अपने दुःख को चुपचाप सहती अवश्य है, पर भीतर से अन्याय को अनुभव भी करती है। 'किस्मत' और 'भग्नावशेष' जैसी कहानियों में स्त्री-जीवन की त्रासदी सामाजिक व्यवस्था से जुड़कर सामने आती है। इन कहानियों के स्त्री-पात्र केवल व्यक्तिगत दुर्भाग्य के शिकार नहीं हैं, उनके जीवन में समाज की कठोरता और पितृसत्तात्मक सोच भी सक्रिय दिखाई देती है। हजारी प्रसाद द्विवेदी ने सुभद्रा की कहानियों के अनुभवगत आधार को स्पष्ट करते हुए लिखा है- "सुभद्रा की कहानियाँ अधिकांश बहुओं और विशेषकर शिक्षित बहुओं के दुखपूर्ण जीवन को देखकर लिखी गई हैं। निस्संदेह उन्होंने केवल किताबी ज्ञान या सुनी-सुनाई बातों के आधार पर कहानियाँ नहीं लिखीं, बल्कि अपने अनुभवों को ही कहानियों में रूपांतरित किया।"[7] इस कथन से स्पष्ट होता है कि सुभद्रा की कहानियाँ जीवनानुभवों की जमीन से जुड़ी हुई हैं। वह स्त्री की पीड़ा को बाहर से नहीं देखतीं, उसे सामाजिक और पारिवारिक संरचना के भीतर समझती हैं।

सुभद्रा की दृष्टि में नारी का आत्मसम्मान केवल बाहरी प्रतिष्ठा का प्रश्न नहीं है। यह उसके भीतर की नैतिक शक्ति, सत्य-बोध और मानवीय गरिमा से जुड़ा हुआ है। 'नारी-हृदय' जैसी कहानी स्त्री के अंतर्मन की कोमलता, संवेदना और आत्मिक संघर्ष को सामने लाती है। यहाँ स्त्री केवल भावुक नहीं है, वह अपने अनुभवों के आधार पर जीवन और संबंधों को समझने वाली सजग सत्ता के रूप में उपस्थित होती है। वह अपने दुःख को नियति मानकर स्वीकार नहीं करती, भीतर से उसे पहचानती और समझती है। वंचित और उपेक्षित स्त्री का चित्रण भी उनके कथा-साहित्य का महत्त्वपूर्ण पक्ष है। 'वेश्या की लड़की' जैसी कहानी समाज की दोहरी मानसिकता को सामने लाती है। इसमें स्त्री और उसकी संतान के प्रति समाज का दृष्टिकोण प्रश्नांकित होता है। लेखिका यह संकेत करती हैं कि समाज अक्सर स्त्री को उसके कर्म से अधिक उसकी सामाजिक स्थिति के आधार पर आँकता है। ऐसी दृष्टि स्त्री की गरिमा को आहत करती है और उसे समान मानवीय अधिकारों से वंचित करती है। सुभद्रा ऐसी सामाजिक दृष्टि को चुनौती देती हैं और पाठक को मानवीयता की ओर ले जाती हैं।

आर्थिक अभाव नारी जीवन की समस्याओं को और अधिक तीखा बना देता है। निर्धन स्त्री को मात्र घर-परिवार की जिम्मेदारी ही नहीं निभानी पड़ती, उसे समाज की उपेक्षा और असुरक्षा से भी जूझना पड़ता है। सुभद्रा की कहानियों में ऐसे पात्र मिलते हैं, जो अभाव में रहते हुए भी अपने नैतिक बल को बचाए रखते हैं। यहाँ लेखिका यह दिखाती हैं कि सम्मान धन या सामाजिक पद से नहीं, व्यक्ति के चरित्र और मानवीय व्यवहार से निर्मित होता है। 'होली' की करुणा और 'कैलाशी नानी' जैसे पात्र इसी नैतिक शक्ति के उदाहरण हैं। स्त्री के आत्मसम्मान का एक रूप सत्य के पक्ष में खड़े होने की क्षमता भी है। 'अभियुक्ता' में नायिका का आत्मविश्वास इसी दृष्टि से महत्त्वपूर्ण है। वह आरोप और सामाजिक दबाव के बीच भी अपने आत्मबल को बनाए रखती है। इस तरह कहानी स्त्री को असहाय नहीं रहने देती, उसे निर्णय लेने और अपने पक्ष को व्यक्त करने वाली चेतन सत्ता के रूप में प्रस्तुत करती है। सुभद्रा की कहानियों में स्त्री की यह चेतना उसे साधारण सामाजिक भूमिकाओं से ऊपर उठाकर नैतिक और मानवीय व्यक्तित्व प्रदान करती है। सुभद्रा कुमारी चौहान की कहानियों में नारी जीवन की समस्याएँ करुणा पैदा करती हैं, पर वे केवल दया की अपेक्षा नहीं

करतीं, उनका उद्देश्य स्त्री के प्रति संवेदनशील दृष्टि विकसित करना है। वह पाठक को यह सोचने के लिए प्रेरित करती हैं कि स्त्री की पीड़ा का कारण उसका व्यक्तिगत दुर्भाग्य मात्र नहीं, अपितु सामाजिक व्यवस्था की असमानताएँ भी हैं, इसलिए स्त्री के सम्मान का प्रश्न समाज के नैतिक विकास से जुड़ जाता है।

सामाजिक यथार्थ और पारिवारिक विसंगतियाँ

सुभद्रा कुमारी चौहान के कथा-साहित्य में सामाजिक यथार्थ अत्यंत सहज और जीवन-सापेक्ष रूप में उपस्थित है। उन्होंने समाज को किसी दूरस्थ या आदर्श रूप में नहीं देखा, अपने आसपास के जीवन, पारिवारिक संबंधों, आर्थिक अभाव, सामाजिक रूढ़ियों और मानवीय व्यवहारों के माध्यम से समझा। उनकी कहानियों में समाज मात्र पृष्ठभूमि नहीं है, वह पात्रों के जीवन और निर्णयों को प्रभावित करने वाली सक्रिय शक्ति के रूप में सामने आता है। इसी कारण उनके कथा-साहित्य में सामाजिक यथार्थ और पारिवारिक विसंगतियाँ एक-दूसरे से गहराई से जुड़ी हुई दिखाई देती हैं। सुभद्रा के समय का भारतीय समाज अनेक प्रकार की असमानताओं और रूढ़ियों से घिरा हुआ था। जाति, वर्ग, लिंग, आर्थिक स्थिति और सामाजिक प्रतिष्ठा के आधार पर मनुष्य का मूल्यांकन किया जाता था। परिवार भी इन सामाजिक मान्यताओं से मुक्त नहीं था। घर के भीतर प्रेम, स्नेह और सुरक्षा के साथ-साथ नियंत्रण, दबाव और असमानता भी उपस्थित रहती थी। लेखिका ने इन्हीं जटिल स्थितियों को अपनी कहानियों में स्वाभाविक रूप से व्यक्त किया है।

उनकी कहानियों में पारिवारिक जीवन का चित्रण बहुत निकटता से मिलता है। परिवार व्यक्ति के निर्माण का आधार है, पर कई बार वही परिवार व्यक्ति की स्वतंत्रता और आत्मसम्मान के लिए बाधा बन जाता है। स्त्री के जीवन में यह स्थिति अधिक तीव्र रूप में दिखाई देती है। पति-पत्नी संबंध, सास-बहू संबंध, माता-पिता की अपेक्षाएँ, संतान का दायित्व और समाज की दृष्टि- ये सभी तत्व मिलकर स्त्री के जीवन को प्रभावित करते हैं। सुभद्रा कुमारी चौहान ने इन संबंधों को भावुकता के स्तर पर ही नहीं रखा, उनके भीतर छिपे तनाव और असंतुलन को भी उजागर किया। हजारी प्रसाद द्विवेदी ने सुभद्रा के स्त्री-पात्रों की मार्मिकता को रेखांकित करते हुए लिखा है- "सुभद्रा के स्त्री-चरित्रों का चित्रण अत्यंत मार्मिक एवं स्वाभाविक हुआ है। उनकी कहानियों में सामाजिक व्यवस्था के प्रति एक नकारात्मक घृणा व्यक्त होती है और पाठक सोचता है कि समाज युवतियों के प्रति कितना निर्दयी और कठोर है।"[8] यह कथन सुभद्रा की कहानियों में उपस्थित सामाजिक यथार्थ और स्त्री-पीड़ा को समझने में सहायक है। उनकी कहानियाँ समाज की कठोरता को सीधे अनुभव कराती हैं, परंतु वह केवल नकारात्मकता तक सीमित नहीं रहतीं। वह मनुष्य में सुधार और संवेदना की संभावना भी बनाए रखती हैं।

पारिवारिक विसंगतियों का एक प्रमुख कारण सामाजिक प्रतिष्ठा और बाहरी मर्यादा का दबाव भी है। कई बार परिवार अपने सदस्यों की वास्तविक पीड़ा को समझने के स्थान पर समाज के भय और लोकलाज को अधिक महत्त्व देता है। इससे संबंधों में स्वाभाविकता कम हो जाती है और व्यक्ति अकेलापन अनुभव करने लगता है। सुभद्रा की कहानियों में ऐसे प्रसंग मिलते हैं जहाँ परिवार बाहर से व्यवस्थित दिखता है, पर भीतर संवेदना की कमी, असमान व्यवहार और मानसिक दूरी उपस्थित रहती है। स्त्री के संदर्भ में पारिवारिक विसंगतियाँ और भी गहरी हो जाती हैं। घर को स्त्री का स्वाभाविक क्षेत्र माना गया, पर उसी घर में उसे अधिकार और निर्णय की स्वतंत्रता सीमित रूप में मिली। उससे सेवा, त्याग और सहनशीलता की अपेक्षा की गई लेकिन उसकी इच्छा, शिक्षा, भावना और आत्मसम्मान को पर्याप्त महत्त्व नहीं मिला। सुभद्रा कुमारी चौहान ने इस स्थिति को सीधे उपदेश के रूप में नहीं, कथा-स्थितियों और पात्रों के अनुभवों के माध्यम से प्रस्तुत किया है। उनकी कहानियों में पारिवारिक संबंधों की जटिलता भी उल्लेखनीय है। परिवार में प्रेम और दायित्व हैं, पर साथ ही अपेक्षा, असमानता और उपेक्षा भी है। लेखिका इस द्वंद्व को संतुलित ढंग से प्रस्तुत करती

हैं। वह परिवार को पूरी तरह अस्वीकार नहीं करतीं, पर उसके भीतर उपस्थित अन्यायपूर्ण व्यवहारों पर प्रश्न अवश्य उठाती हैं। इस दृष्टि से उनका कथा-साहित्य भारतीय पारिवारिक व्यवस्था की कमजोरियों को पहचानते हुए मानवीय संबंधों में सुधार की आवश्यकता पर बल देता है।

सुभद्रा कुमारी चौहान के कथा-साहित्य में स्त्री का चित्रण केवल शिक्षित, मध्यवर्गीय या पारिवारिक जीवन तक सीमित नहीं है। उनकी कहानियों में दलित, वंचित, निर्धन और ग्रामीण स्त्रियों का जीवन भी संवेदनशीलता के साथ सामने आता है। यह पक्ष उनके कथा-साहित्य को अधिक व्यापक और सामाजिक बनाता है। वह स्त्री-जीवन को घर की चारदीवारी तक सीमित नहीं रखतीं, उनकी दृष्टि समाज के उन वर्गों तक भी पहुँचती है, जहाँ अभाव, उपेक्षा, श्रम और सामाजिक असमानता स्त्री के जीवन को और अधिक कठिन बना देते हैं। दलित और वंचित स्त्रियों की स्थिति समाज में दोहरे स्तर पर कठिन रही है। एक ओर वे स्त्री होने के कारण पितृसत्तात्मक व्यवस्था का दबाव सहती हैं, दूसरी ओर जाति, वर्ग और गरीबी के कारण उन्हें अतिरिक्त उपेक्षा का सामना करना पड़ता है। सुभद्रा ने ऐसी स्त्रियों को केवल दया की पात्र बनाकर प्रस्तुत नहीं किया। उन्होंने उनके जीवन में छिपी मेहनत, आत्मसम्मान, सहनशीलता और मानवीय गरिमा को भी पहचाना।

ग्रामीण स्त्री का जीवन उनकी कहानियों में विशेष रूप से उल्लेखनीय है। गाँव का परिवेश बाहर से सरल और आत्मीय दिखाई देता है, पर उसके भीतर अनेक प्रकार की सामाजिक जटिलताएँ मौजूद रहती हैं। ग्रामीण स्त्री परिवार, खेत-खलिहान, घरेलू श्रम, जातिगत व्यवहार और आर्थिक अभाव के बीच अपना जीवन बिताती है। उसे शिक्षा, स्वतंत्रता और निर्णय का अवसर कम मिलता है, फिर भी वह जीवन की कठिनाइयों का सामना अद्भुत धैर्य से करती है। सुभद्रा की कथा-दृष्टि इसी मौन संघर्ष को पहचानती है। 'कैलाशी नानी' जैसी कहानी में ग्रामीण और निर्धन स्त्री का ऐसा रूप सामने आता है, जो अभावग्रस्त होते हुए भी भीतर से दृढ़ है। कैलाशी नानी केवल एक वृद्ध स्त्री नहीं है, वह अनुभव, संवेदना और नैतिक शक्ति की प्रतिनिधि है। उसके जीवन में गरीबी है, सामाजिक उपेक्षा है लेकिन वह अपनी मानवीयता नहीं छोड़ती। इस पात्र के माध्यम से लेखिका यह दिखाती हैं कि समाज के हाशिये पर खड़ी स्त्री भी गरिमा और आत्मबल से सम्पन्न हो सकती है।

वंचित स्त्री के चित्रण में सुभद्रा कुमारी चौहान सामाजिक दृष्टि की कठोरता को भी सामने लाती हैं। 'वेश्या की लड़की' जैसी कहानी में समाज की संकीर्ण मानसिकता उजागर होती है। स्त्री और उसकी संतान को समाज अक्सर पूर्वाग्रहों के आधार पर देखता है। जन्म, परिवार या सामाजिक पृष्ठभूमि के आधार पर किसी व्यक्ति का मूल्य तय करना अमानवीय दृष्टि है। लेखिका इस प्रकार के सामाजिक व्यवहार को कथा के माध्यम से प्रश्नांकित करती हैं और पाठक को मानवीय दृष्टि अपनाने के लिए प्रेरित करती हैं। सुभद्रा की कहानियों में श्रमिक और निम्नवर्गीय जीवन से जुड़ी स्त्रियों की समस्याएँ भी दिखाई देती हैं। आर्थिक अभाव उनके जीवन को केवल कठिन नहीं बनाता, वह उनके सम्मान और स्वतंत्रता को भी प्रभावित करता है। निर्धन स्त्री को परिवार चलाने, सामाजिक उपेक्षा सहने और जीवन की मूल आवश्यकताओं के लिए संघर्ष करने की स्थिति से गुजरना पड़ता है। दलित और ग्रामीण स्त्री के प्रति समाज का व्यवहार अक्सर सहानुभूतिपूर्ण नहीं होता। उसे श्रम तो करना पड़ता है, पर सम्मान कम मिलता है। वह परिवार और समाज दोनों के लिए उपयोगी होती है, फिर भी उसके अस्तित्व को बराबरी की दृष्टि से स्वीकार नहीं किया जाता। सुभद्रा की विशेषता यह है कि वह ऐसी स्त्री को मात्र पृष्ठभूमि में नहीं रखतीं, वह उसके जीवन को कथा का महत्त्वपूर्ण हिस्सा बनाती हैं और उसके अनुभवों को सामाजिक प्रश्न में बदल देती हैं।

'देवदासी' कहानी में स्त्री की अस्मिता और सामाजिक बंधनों का प्रश्न अत्यंत प्रभावशाली रूप में सामने आता है। प्रतिमा का कथन- "सीता सती न होकर भी मैं दुराचारिणी नहीं हूँ"[9], स्त्री के आत्मसम्मान और पुरुष-निर्धारित नैतिक मानदंडों के विरोध को व्यक्त करता है। यह कथन स्त्री की स्वतंत्र नैतिक सत्ता को स्वीकार करता है। इसी कहानी में विवाह को लेकर यह विचार भी मिलता है- "विवाह दो आत्माओं का मिलन होता है।"[10] यह कथन विवाह को सामाजिक व्यवस्था ही नहीं, बल्कि समानता और आत्मीयता पर आधारित मानवीय संबंध के रूप में देखने की प्रेरणा देता है। सुभद्रा के कथा-साहित्य में दलित, वंचित और ग्रामीण स्त्री का चित्रण सामाजिक यथार्थ को गहराई प्रदान करता है। ये स्त्रियाँ समाज के उन हिस्सों का प्रतिनिधित्व करती हैं, जिन्हें साहित्य में लंबे समय तक पर्याप्त स्थान नहीं मिला। उनके माध्यम से लेखिका ने गरीबी, जातिगत असमानता, सामाजिक उपेक्षा, श्रम, स्त्री-अस्मिता और मानवीय गरिमा जैसे प्रश्नों को उठाया है।

निष्कर्ष-

सुभद्रा कुमारी चौहान का कथा-साहित्य स्त्री-जीवन, सामाजिक यथार्थ और मानवीय संवेदना की दृष्टि से अत्यंत महत्त्वपूर्ण है। उनकी कथा-दृष्टि जीवन के सामान्य प्रसंगों से जुड़ी हुई है, इसलिए उनकी कहानियाँ बनावटी न होकर सहज, स्वाभाविक और यथार्थपरक प्रतीत होती हैं। उनकी कहानियों में स्त्री अपने आत्मसम्मान, अधिकार-बोध और नैतिक शक्ति के साथ उपस्थित होती है। पारिवारिक दबाव, सामाजिक रूढ़ियाँ, आर्थिक अभाव और पितृसत्तात्मक सोच उसके जीवन को प्रभावित करते हैं, फिर भी वह अपनी मानवीय गरिमा को बचाए रखने का प्रयास करती हैं। यही चेतना सुभद्रा के कथा-साहित्य को स्त्री-अध्ययन की दृष्टि से महत्त्वपूर्ण बनाती है। सुभद्रा ने सामाजिक यथार्थ को भी गहरी संवेदना के साथ प्रस्तुत किया है। उनकी कहानियों में गरीबी, वर्ग-भेद, जातिगत असमानता, पारिवारिक विसंगतियाँ, लोकलाज, अन्याय और उपेक्षा जैसे प्रश्न उभरते हैं, इसीलिए उनकी कहानियों में समाज की कठोर सच्चाइयों के साथ मनुष्य के प्रति विश्वास और सुधार की संभावना भी बनी रहती है। उनके कथा-साहित्य का एक महत्त्वपूर्ण पक्ष दलित, वंचित और ग्रामीण स्त्री का चित्रण है। उन्होंने समाज के हाशिये पर स्थित स्त्रियों को भी संवेदना और सम्मान के साथ प्रस्तुत किया। ऐसी स्त्रियाँ अभाव, श्रम और उपेक्षा से घिरी हुई हैं, पर उनके भीतर धैर्य, नैतिक शक्ति और जीवन-संघर्ष की क्षमता विद्यमान है। सुभद्रा कुमारी चौहान की कहानियाँ यह स्पष्ट करती हैं कि स्त्री-चेतना केवल अधिकार प्राप्ति की आकांक्षा नहीं है, यह आत्मसम्मान, नैतिक विवेक, सामाजिक उत्तरदायित्व और मानवीय संवेदना से निर्मित व्यापक चेतना है। उनकी स्त्रियाँ परिस्थितियों से संघर्ष करती हैं, अपने मौन में भी प्रतिरोध रखती हैं और समय आने पर अन्याय के विरुद्ध खड़ी होती हैं। इसीलिए उनका कथा-साहित्य हिन्दी कहानी परंपरा में स्त्री-चेतना और सामाजिक यथार्थ की दृष्टि से विशिष्ट स्थान रखता है।

संदर्भ सूची

1. उपाध्याय, राजेन्द्र, जनमनमयी सुभद्रा कुमारी चौहान, दिल्ली, परमेश्वरी प्रकाशन, 2016, पृ. 7
2. वर्मा, महादेवी, पथ के साथी, इलाहाबाद, लोकभारती प्रकाशन, 2010, पृ. 38
3. चौहान, सुभद्रा कुमारी, सुभद्रा समग्र, इलाहाबाद, हंस प्रकाशन, 2014, पृ. 42
4. वही, पृ. 14
5. वही, पृ. 124

6. वर्मा, महादेवी, पथ के साथी, इलाहाबाद, लोकभारती प्रकाशन, 2010, पृ. 38
7. राजस्वी, एम.आई, राष्ट्रभक्त कवयित्री सुभद्रा कुमारी चौहान, नई दिल्ली, ज्ञान विज्ञान एजुकेयर, 2016, पृ. 128–129
8. वही, पृ. 128–129
9. चौहान, सुभद्रा कुमारी, सुभद्रा समग्र, इलाहाबाद, हंस प्रकाशन, 2014, पृ. 299
10. वही, पृ. 303